REVIEW OF RESEARCH
IMPACT FACTOR : 5.2331(UIF) UGC APPROVED JOURNAL NO. 48514 ISSN: 2249-894X
VOLUME - 7 | ISSUE - 7 | APRIL - 2018

जीवन संस्कार एवं प्रकार्यात्मक विश्लेषण

(Rites of Passage and Functional Analysis)

डॉ. सुषमा नयाल
असिस्टेंट प्रोफेसर , समाजशास्त्र विभाग
एस.एम.जे.एन.(पी.जी.) कॉलेज, हरिद्वार.

सारांश :–

जीवन संस्कार(Rites of Passage) या जीवन अनुष्ठान वह धार्मिक रीतियाँ (Rituvals) हैं जो एक व्यक्ति (स्त्री एवं पुरुष) के जीवन में सामाजिक एवं लैंगिक प्रस्थिति को परिवर्तित करती है, या निर्मित करती है। जीवन संस्कार जीवन के उन अवसरों एवं समारोहों का रूप है जो किसी व्यक्ति के जीवनकाल में अलग–अलग आयु पर आयोजित किये जाते हैं, जीवन काल के यह आयोजन धार्मिक रीतियों के माध्यम से ही पूर्ण किये जाते हैं, जैसे–बाल्यावस्था, किशोर, युवावस्था एवं वृद्धावस्था में अलग–अलग जीवन संस्कार कर व्यक्ति की भिन्न–भिन्न प्रस्थितियों से व्यक्ति को जोड़ा जाता है। भिन्न आयुकाल में धार्मिक रीतियों द्वारा सनातन धर्म में नामकरण, चूड़ाकर्म, विद्यारम्भ, विवाह, अन्तिम संस्कार के रूप मे धार्मिक अनुष्ठान अथवा जीवन संस्कार ही हैं। इसी प्रकार सिख धर्म में पंचाकार, दस्तरबन्दी, पगड़ी रखना, ईसाई धर्म में बपतिस्मा, पाप स्वीकार्यता, इस्लाम में हज (Pilgrimage) आदि जीवन संस्कार के स्वरूपहैं।

प्रस्तावना–

जीवन में शुद्धता बनाने हेतु एवं व्यक्ति को नये जीवन उद्देश्यों से जोड़ने, उत्तरदायित्वों से परिचय कराने के लिए सामुहिक आयोजन किये जाते हैं। इन सामुहिक आयोजनों को पवित्र घटना का रूप देकर धार्मिक रीतियों को निभाते हुए जो अनुष्ठान किये जाते हैं, वह जीवन संस्कार एवं धार्मिक घटना कहलाती है। जीवन संस्कार सभी समाज व धर्मों की सांस्कृतिक विशेषता है, यह वह क्रियायें होती हैं जो किसी समाज में निश्चित समय पर औपचारिक तरीकों से सम्पादित की जाती है, ये संस्कार सामाजिक जीवन में विशेष अवसरों से व्यक्ति के जीवन चक्र की विशिष्ठ घटनाओं से सम्बन्धित होते हैं, जीवन संस्कार उन स्थायी भावों को भी प्रकट करते हैं जो समाज में व्यक्ति को किसी सामाजिक संरचना अथवा सामाजिक समूहों से जोड़ता है। फलस्वरूप जीवन संस्कारों से सामाजिक समूह, संरचना, समुदाय विकसित एवं स्थायी होते हैं। जीवन संस्कार धार्मिक स्वरूपों के अनुरूप एक व्यक्ति के जीवन में कम या अधिक हो सकते हैं, धार्मिक पृष्ठभूमि के अनुसार जीवन संस्कार को आनुष्ठानिक रूप मिलता है, जैसे भिन्न धर्मो में अनुष्ठान एवं धार्मिक रीतियाँ भी भिन्न होती हैं, परन्तु जैसा कि पूर्व उल्लेखित है कि व्यक्ति के बाल्यावस्था, युवावस्था, वयस्कता एवं वृद्धावस्था काल के अनुरूप भूमिका निवर्हन हेतु धार्मिक रीतियों के आयोजन द्वारा व्यक्ति का जीवन चक्र या जीवन चरण पूर्ण किया जाता है या नवीन चक्र मे प्रविष्ट किया जाता है इस प्रकार जीवन संस्कार इन्हीं जीवन चक्रों मे प्रवेश कराने अथवा पूर्ण करने के अनुष्ठान हैं।

अवधारणात्मक स्पष्टीकरण :–

जीवन संस्कार शब्द को चलन मे सर्वप्रथम प्रसिद्ध जर्मन लोकविधिशास्त्री अर्नोल्ड़ वान जीनेप (1873–1957) Arnold Van Gennep ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'The Rites of Passage' में 1909

में किया। **जीनेप के अनुसार**–''जीवन संस्कार किसी व्यक्ति या समूह का वह जीवन चक्र है जिसमें व्यक्ति धार्मिक पवित्र रीतियों के माध्यम से प्रवेश करता है, तथा जीवन में कर्तव्यों के रूपान्तरण से गुजरता है, इस रूपान्तरण के साथ व्यक्ति नवीन भूमिकाओं को भी निर्वहन एवं ग्रहण करता है।''इस प्रकार जीवन संस्कार आनुष्ठानिक घटनायें हैं, जिनमें धार्मिक रीतियों का समावेश होता है, इन रीतियों से व्यक्ति को सामाजिक संरचनाओं से भी सामुहिक रूप से जोड़ा जाता है, यह रीतियाँ ही हैं जो व्यक्ति को जीवन के भिन्न–भिन्न जीवन चक्रों या कालों में प्रवेश कराती हैं, एवं व्यक्ति को महत्वपूर्ण उत्तरदायित्वों जैसे–विभिन्न संस्थाओं, जन्म, विवाह, शिक्षा, आजीविका आदि जीवन पक्षों में प्रवेश कराती हैं, जीवन संस्कार भिन्न–भिन्न धर्मों की संस्कृति के अनुसार तय होते हैं, परन्तु जन्म, विवाह, मृत्यु के जीवन संस्कार सभी धर्म, समाजों में सार्वभौमिक होते हैं।

जीवन संस्कारों के सन्दर्भ में **अर्नोल्ड वॉन जीनेप** ने तीन प्रमुख चरणों अथवा भागों में बाँटा है–

1. पृथकत्वकाल अथवा वियुक्ति(Sepration)
2. संक्रमणकाल (Liminal or Transition)
3. समावेशीकाल अथवा निगमन (Incorporation or Agregation)

1. पृथकत्वकाल अथवा प्रथम चरण(Sepration):–

जीवन चक्र का वह समय जिसमें व्यक्ति अपने पूर्व जीवन की रीतियों से पृथक होता है, जब व्यक्ति वर्तमान रीतियों से स्वयं को पृथक करता है, एवं उन्हें त्यागता है या रीतियों से स्वयं का आहरण करता है तो प्रथम चरण है, इस चरण में व्यक्ति का अपने समूहों से पृथक्करण (Deatachment) होता है, एवं व्यक्ति प्रतीकात्मक क्रिया एवं रीतियों से भिन्न होता है, जैसे–किसी नौजवान द्वारा राष्ट्र रक्षा के दायित्व में जाने या सम्भालने पर अपनी जीवनशैली, भोज्य आदत, अपने केश स्वरूप को परिवर्तित कर पूर्व के स्वरूप को त्यागना पड़ता है। किसी सिख युवक का बचपन से युवावस्था में जाने पर दस्तरबन्दी या पगड़ी रखना प्रारम्भ करना पड़ता है। यह घटनाएँ व्यक्ति के धर्म व समूह के प्रति जिम्मेदार जागरूक होने का आभास भी है।

2. संक्रमणकाल अथवा द्वितीय चरण (Transition):–

प्रथम चरण के बाद का वह समय जबकि किसी स्थान क्षेत्र या संस्कृति से पृथक होकर व्यक्ति एक समय विशेष तक किसी अन्य क्षेत्र समूह व संस्कृति विशेष को स्वीकार करता है, संक्रमण काल कहलाता है। यह समय जीवन संस्कार का महत्वपूर्ण चक्र है। जब व्यक्ति सामाजिक जगत व व्यवहार के **प्रति संक्रमण** दौर से गुजरता है, जैसे विवाह, सेवा आदि। जिस दौर में व्यक्ति नये विधान या जीवन के नये संस्कार, रीति, प्रथा, क्षेत्र व विचारों में प्रवेश करने से पूर्व स्वयं को समय देता है। पुरानी एवं नवीन भूमिकाओं के मध्य का समयकाल है, एवं जीवन चक्र का मध्य तथा महत्वपूर्ण समय है, जिसमें प्रवेश कराने हेतु धार्मिक संस्कारों का सामुहिक आयोजन किया जाता है ताकि व्यक्ति अपनी संस्कृति से परिचय कर सके।

3. समावेशीकाल अथवा तीसरा चरण(Agregation) :–

व्यक्ति के जीवन काल का वह चरण जिसमें व्यक्ति व्यक्तिगत एवं सामाजिक नवीन परिस्थितियों से जुड़ता है, इस समय जीवन संस्कारों के द्वारा नवीन रीतियों एवं भूमिकाओं को स्वीकारता है। इस चरण में संस्कारों के द्वारा व्यक्ति को समाज एवं समुदाय से जोड़ा जाता है, नवीन पद भूमिका, कर्तव्यों को पुनः धारण करता है।

भारतीय समाज में विवाह के उपरान्त जब व्यक्ति आयु के तीसरे चरण में जाता है तो सन्तान एवं माता–पिता से सम्बन्धी कई संस्कारों के आयोजन का पवित्र माध्यम बनकर नवीन एवं प्रौढ़ भूमिकाओं का निर्वहन करता है। इस्लाम व ईसाई धर्म के क्रमशः हज व वपतिस्मा अधिकांशतः आयु के तीसरे चरण के ही संस्कार हैं।

अतः जीवन संस्कार या अनुष्ठान जीवन काल की वह सांस्कारिक घटनायें हैं जो व्यक्ति की जीवन चक्र से जुड़ी हैं, एवं आयु के अलग–अलग चरणों से सम्बन्धित हैं, जिम्मेदारियों के साथ एक चरण से जीवन काल के दूसरे चरण में धार्मिक रीतियों के साथ सामुहिक उपस्थिति में प्रविष्ठ करने की घटना जीवन संस्कार

'Rites of Passage' कहलाती है। पवित्र धार्मिक रीतियों के द्वारा अनुष्ठान ही जीवन संस्कार को परिशुद्ध करते हैं।

पद्धतिशास्त्र–

प्रस्तुत शोध पत्र मे अध्ययन पद्धति प्रकार्यात्मक पद्धति है,अर्थात् विष्लेषण करने या अध्ययन करने का वह तरीका जिसमे सम्बन्धित अध्ययन ईकाई का संरचनात्मक महत्व एवं भूमिका का अध्ययन किया जाता है। यहां प्रकार्यात्मक महत्व से तात्पर्य है किजीवन संस्कारों की सामाजिक संरचना मे क्या भूमिका है, तथा लोगों के जीवन मे इनका क्या प्रभाव है, क्योंकि जीवन संस्कार सामाजिक संरचना का महत्वपूर्ण अंग है एवं सामाजिक संरचना को बनाए रखने हेतु संस्कारों की भूमिका व प्रकार्यों से संरचना में गतिषीलता बनती है, जीवन संस्कार सामाजिक संरचना को किस प्रकार निरन्तरता प्रदान करते हैं? यह विशेष पहलु प्रकार्यात्मक पक्ष को उजागर करते हैं।

अध्ययन उद्देश्य–

प्रस्तुत पत्र के अध्ययन के निम्न उद्देष्य हैं–

1. जीवन संस्कारों की व्याख्या करना।
2. प्रतीकात्मक अन्तःक्रिया के रूप मे महत्व ज्ञात करना।
3. सामुहिक व्याख्या के रूप मे जीवन संस्कारों का विष्लेषण।
4. सामाजिक व्यवस्था के रूप मे जीवन संस्कारों की विवेचना।

जीवन संस्कारों का प्रकार्यात्मक महत्व–

जीवन संस्कार व्यक्ति के जीवन चक्र से सम्बन्धित होते हैं, व्यक्ति की आयु अनुसार जीवन चरण भी परिवर्तित होते हैं, आयु एवं बदलते कर्तव्यों के साथ नवीन कर्तव्यों में प्रविष्ठ करने के साथ धार्मिक रीतियों सहित एक सामाजिक चरण से दूसरे चरण में प्रवेश कराने हेतु इन संस्कारों का महत्व है, इस प्रकार प्रथम प्रकार्यात्मक महत्व यह है किजीवन संस्कार धार्मिक रीतियों के द्वारा व्यक्ति के जीवन काल को परिवर्तित करते हैं, इस कारण धार्मिक संस्कारों की **प्रकृति एवं प्रवृत्ति धार्मिक** होती हैं, धार्मिक गतिविधियों में भी विस्तार होता है। दूसरा महत्व इस रूप मे है कि जीवन संस्कार**शुद्धता का प्रतीक** हैं, सभी जीवन अनुष्ठान एवं धार्मिक घटनाएँ पवित्र, शुभ, शुद्धता का प्रतीक होती हैं, जैसे हिन्दू, इस्लाम, बौध, सिख आदि धर्मों की सभी क्रिया–विधियाँ शुद्ध तथा पवित्रता का प्रतीक मानी जाती हैं।

तीसरा महत्व इस रूप मे उजागर होता है कि जीवन संस्कार **सामुहिक एकता का विकास**करते हैं, जीवन संस्कारों के माध्यम से व्यक्ति एवं समाज के मध्य सामाजिक सम्बन्ध मजबूत होते हैं, साथ ही व्यक्ति का समूह से भी सामाजिक परिचय होता है, क्योंकि जीवन संस्कारों के आयोजनों से सामुहिकता एवं समूहवादी एकता की अवधारणा विकसित होती है, अधिकांश जीवन संस्कार सामाजिक सम्बन्धियों एवं समूहों की उपस्थिति में ही आयोजित होते हैं। चौथा प्रकार्यात्मक महत्व है जीवन संस्कारों मे प्रयोग होने वाले **प्रतीकात्मकएवं सांकेतिक विस्तार,**सभी जीवन संस्कार धार्मिकता पर आधारित हैं, एवं सभी संस्कारों की रीतियाँ धर्मग्रन्थों से सन्दर्भित होते हैं, इन सन्दर्भों में प्रतीकात्मक निर्देश होते हैं, जैंसे– धार्मिक संस्कार मौखिक, सांकेतिक (रंग, प्रतीक), मंत्रमयी, पुस्तकीय, सांस्कृतिक वेशभूषा, शारीरिक क्रियाओं (खड़े होकर, झुककर, घुटनों के बल बैठकर) के आधार पर शैलीगत ढंग से प्रचलित तरीकों से विशेष रूपों से पूर्ण किये जाते हैं। संस्कारों में प्रतीकात्मक विशेषता है, यह विभिन्न धर्मों के स्वरूपों पर ही निर्भर करती है, जैसे–हिन्दू धर्म के संस्कारों व उत्सवों में काला व सफेद रंग की तुलना में गहरे रंगों के प्रयोग का विधान है, परन्तु ईसाई धर्म के विवाह समरोह में धार्मिक रीति के अनुसार विवाह में काला व सफेद प्रतीक चलन में है। इस प्रकार प्रतीकात्मक अन्तःक्रिया का विस्तार भी प्रकार्यात्मक महत्व को बड़ाता है, जोकि लोगों के मध्य अन्तःक्रिया के लिए अतयन्त ही आवष्यक है।

प्रतिमानों का पालन एवं अनुसरण भी जीवन संस्कारों के प्रकार्यात्मक महत्व को दर्षाता है। सभी जीवन संस्कार व्यक्तियों को प्रतिमानित व्यवहार एवं खास नियमों के पालन हेतु प्रोत्साहित करते हैं, साथ ही जीवन संस्कार एक खास प्रकार के आनुष्ठानिक व्यवहार में शामिल होने हेतु प्रेरित करते हैं। जीवन संस्कार में

रीतियों का प्रयोग कर नियमों की स्थापना की जाती है, जोकि अनुशासनात्मक आचरण हेतु व्यक्तियों को प्रोत्साहित भी करते हैं, जैसे– विवाह के खास नियमों के पालन में तार्किकता की अपेक्षा भावनात्मक दृष्टि से सभी विधियों का पालन सभी को स्वीकार्य होता है, इसी प्रकार अन्य संस्कारों पर भी व्यक्तियों द्वारा प्रश्न–चिह्न नहीं लगाये जाते क्योंकि यह संस्कार सामाजिक रूप से मान्य हैं, इनसे बाहर जाने का तात्पर्य है अनुशासनात्मक व्यवस्था से बाहर जाना। इस प्रकार सामाजिक व्यवस्था बनाये रखने में भी जीवन संस्कारों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है।

निष्कर्ष–

स्पष्ट है कि जीवन संस्कार सामाजिक संरचना का विषेष अंग है एवं सामाजिक संरचना, व्यक्ति के जीवन मे जीवन संस्कारों का योगदान है, सामाजिक सम्बन्धों को मजबूत करने, सामाजिक व्यवस्था में अनुषासनात्मक विस्तार करने में, सामुहिकता का गठन, प्रतीकात्मक अन्तःक्रियात्मक व्यवहार को विकसित करने में एवं धर्म के स्वरूप को स्थापित करने मे जीवन संस्कारों की महत्वपूर्ण भूमिका है। जीवन संस्कार एक प्रकार के विशेष व्यवहार हैं, जिसमें सम्मिलित होने वालेसभी लोग इन अनुष्ठानों के प्रति विशेष अर्थ लगाते हैं, अनुष्ठान अथवा संस्कार के प्रति विशेष आचरण व विचार रखते हैं, अनुष्ठान में प्रतिभाग होने वाले सभी लोगों व्यवहार अनुष्ठान के प्रति सचेत होता है। इसके अतिरिक्त जागरूकता एवं सचेतन व्यवहार विकसित होता है। सभी लोग व्यक्तिगत स्वायतत्ता का परित्याग कर संस्कार के अनुरूप ही अनुष्ठान का हिस्सा बनते हैं, फिर वह अनुष्ठान में सम्मिलित समूह हो या जिस व्यक्ति हेतु अनुष्ठान आयोजित हो।